© 2019 IJSRSET | Volume 6 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Education

# कादम्बरी में अन्तर्निहित धर्मशास्त्रीय तत्व

संगीता जायसवाल
शोध छात्रा, संस्कृत विभाग,
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय,
गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत।

**सारांश–** बाण ने कादम्बरी में जगह–जगह पर धार्मिक प्रसंगों का उल्लेख कर अपने धर्मषास्त्र–विषयक ज्ञान से पाठकों को परिचित कराने का पूर्ण प्रयास किया है।

**मुख्यशब्द–**कादम्बरी, धर्मशास्त्री, तत्व, धार्मिक, संस्कृत, साहित्य, पुरुषार्थ।

---

मनुष्य तथा समाज की उन्नति के निमित्त हिन्दू शास्त्रकारों ने जिन आदर्शों का विधान प्रस्तुत किया है उनमें 'धर्म' का सर्वोच्च स्थान है। मनुष्य के चार पुरूषार्थों में धर्म अन्यतम है। धर्म मनुष्य तथा समाज के बीच सम्बन्धों को नियन्त्रित भी करता है। धर्म शब्द मूलतः 'धृ' धातु से निष्पत्र होता है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'धारण करना' अथवा अस्तित्व बनाये रखना। यह वह तत्व है जो मनुष्य तथा समाज के अस्तित्व को कायम रखता है। यह सामाजिक व्यवस्था का नियामक है। महाभारत में कहा गया है कि 'धर्म सभी प्राणियों की रक्षा करता है, सभी को सुरक्षित रखता है तथा सृष्टि का अस्तित्व बनाये रखता है।[1] इसी में आगे बताया गया है कि धर्म की व्यवस्था सभी प्राणियों के कल्याण के लिये की गयी है, जिसमें सभी प्राणियों का हित होता है वही धर्म है।[2] वैशेषिक दर्शन में कहा गया है कि जिससे लौकिक तथा पारलौकिक कल्याण की सिद्धि होती है वह धर्म है।'[3]

विभिन्न युगों में समाज के संस्कार, शिक्षा, नीति, आराधना, व्यवसाय, राज्य एवं न्याय व्यवस्था, खान–पान आदि का निर्देश धर्म के ऐसे अनुशासन द्वारा होता आया है जो समन्वित रूप में 'शास्त्र' कहे जाते हैं। तन्त्रवार्तिक के अनुसार धर्मशास्त्रों का कार्य है वर्णों एवं आश्रमों की शिक्षा देना।[4]

1. धारणात् धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
   यत्स्याद्धारण संयुक्तं स 'धर्म' इति निश्चयः।।'–महाभारत (कर्णपर्व)
2. प्रभवार्थं च भूतानां धर्म प्रवचंन कृतम्।–महाभारत
3. यतोऽभ्युदय निःश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः।–कणाद्, वैशेषिकदर्शन

4. सर्वधर्म सूत्राणां वर्णाश्रम धर्मोपदेशित्वात् कुमारित्न।–तन्त्रवार्तिक

धर्मशास्त्रकारों के मतानुसार धर्म किसी सम्प्रदाय या मत का द्योतक नहीं है? प्रत्युत यह जीवन का एक ढंग यां आचरण संहिता है जो समाज के किसी अंग एवं व्यक्ति के रूप में मनुष्यों के आचरणों एवं कृत्यों को व्यवस्थापित करता है तथा उसमें क्रमशः विकास लाता हुआ उसे मानवीय अस्तित्व के लक्ष्य तक पहुँचने के योग्य बनाता है।[1]

जहाँ वेद कर्म को ही धर्म का लक्षण मानते हैं[2], वहीं मनुस्मृति में धर्म के अहिंसा, सत्य, अस्तेय आदि दश लक्षण[3] गिनाये गये हैं, जो कि मनुष्य के सम्पूर्ण कर्मे के औचित्य–अनौचित्य का निर्णय करने में अपनी महनीय भूमिका निभाते हैं।[4] वस्तुतः धर्म नामक तत्व सभी प्राणियों में सन्निहित रहता है।

महाकवि बाण धर्मशास्त्र के ज्ञाता थे कादम्बरी में जगह–जगह धर्मशास्त्र विषयक अनेक प्रसंग उपलब्ध होते हैं। कादम्बरी के उत्तरभाग में पुरूषार्थ के साधन के रूप में धर्म, अर्थ और काम का उल्लेख प्राप्त होता है जब चन्द्रापीड वैशम्पायन द्वारा वैराग्य ग्रहण कर लेने पर कहता है कि, उसने तो न ही पुरूषार्थ के साधनों–धर्म, अर्थ तथा काम में से किसी भी एक को प्राप्त किया है।[3] महाकवि बाण पुरूषार्थ चतुष्टय में धर्म को ही प्रधान मानते हैं, क्योंकि उज्जयिनी के विलासीजनों के प्रसंग में यह उल्लेख आया है कि वे (विलासी जन) काम और अर्थ में आसक्त होते हुये भी धर्म रूप

1. बृहदारण्यक उपनिषद् 1/3/28, केनोपनिषद 2/5

अनेन धर्मः सविशेषमद्य में त्रिवर्गसारः प्रतिभाति भाविनि।

–षष्ठांशवृत्तेरपि धर्म एष–अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/4

– दिव्यास्त्रगुणसम्पत्रः परं धर्म गतो युद्धि–रामायण

न तेन पुरूषार्थसाधनानां धर्मार्थकामानामेकोपि हि प्राप्तः। –कादम्बरी उत्तरार्द्ध, पृ0 163

पुरूषार्थ को ही प्रधान मानने वाले थे।[1] धर्म के तीन स्कन्ध माने गये हैं– यज्ञ, अध्ययन और दान। इन तीनों के विवरण कादम्बरी कथा में प्राप्त होते हैं। 'यज्ञ' मनुष्य के आत्मिक उत्कर्ष के साथ–साथ मानसिक शान्ति एवं विभिन्न पातकों के शमन हेतु उपादान माने जाते हैं। शूद्रक विभिन्न यज्ञों का अनुष्ठाता था–आहर्त्ताक्रतूनाम्। न केवल राजा द्वारा ही यज्ञ करने का विधान था अपितु प्रजा में भी यज्ञ करने का प्रचलन था। यह तथ्य इस बात से स्पष्ट है कि शूद्रक के शासन करते समय निरन्तर होने वाले यज्ञों के धूँधों के कारण ही आँखों से अश्रुपात होता था[2] न कि किसी प्रिय के असामयिक मरणादि के शोक से।

धर्मशास्त्रों में अनेक प्रकार के यज्ञों–अग्निहोत्र, अग्निष्टोम, सौत्रामणि, दर्श, पूर्णमास, राजसूय, अश्वमेध, वाजपेय इत्यादि का उल्लेख मिलता है। ये सभी जटिल यज्ञ की कोटि में आते हैं जिन्हें श्रौताग्नि कहा जाता है। कादम्बरी में सरल एवं साधारण कोटि के यज्ञों का ही प्रायः वर्णन प्राप्त होता है। इसके अन्तर्गत हवन/होम, औपासन, श्रवणयज्ञ को परिगणित किया जाता है। जाबालि आश्रम के वर्णन में उल्लेख मिलता है कि आश्रम में परिचित मयूरों द्वारा अपने पंखों के पुटों से ऋषियों की हवनाग्नि प्रज्जवलित की जा रही थी।[3]

हवन के लिये घी की आहुतियों का प्रयोग करने से आश्रम अग्नि के झंकार (झन्–झन् ऐसे) शब्द से शब्दायमान था।[4]

1. कामार्थपरेणापि धर्म–प्रधानेन.....। –काद0, पृ0–250

2. अनवरतमखाग्नि धूमेनाश्रुपातः.....। –कादम्बरी, पृ0–32

3. उपजात–परिचयैः कलापिभिः पक्षपुटपवन–सन्धुक्ष्यमाणमुनिहोम–हुताशनम्.....।–काद0 पृ0 189

4. अविच्छित्राज्यधारा हुतिहुतभुग्–झंकार–मुखरितम्.....। – काद0, पृ0 189

प्राचीन धर्मग्रन्थों में यज्ञ की अग्नि को मनुष्य एवं देवताओं के बीच की कड़ी माना गया है। अग्नि के माध्यम से ही आहुतियाँ सीधे देवताओं तक पहुँचती हैं। कोई भी याग अग्नि के अभाव में अनुष्ठित नहीं किया जा सकता। याग में तीन अग्नियाँ मुख्य होती हैं– गार्हपत्य, आह्वनीय एवं दक्षिणाग्नि।[1] इनमें गार्हपत्य अग्नि तो सदा ही प्रज्जवलित रहती है, परन्तु आह्वनीय तथा दक्षिणाग्नि को प्रज्जवलित किये बिना यज्ञ–याग का सम्पादन ही असम्भव है। कादम्बरी में भी यज्ञ–अग्नि का उल्लेख आया है। बाण ने जाबालि ऋषि की तुलना यज्ञ सम्बन्धी अग्नि से घिरे हुये यज्ञ से की है।[2] आगे इसी में उल्लेख आया है कि जाबालि आश्रम में यज्ञ सम्बन्धी अग्नियाँ मुनियों को सशरीर स्वर्ग ले जाने के लिये धूमलेखा के बहाने से मानो सोपान–सेतु का निर्माण करती हुयी प्रतीत हो रही थीं।[3]

'अध्ययन' का विवरण देते हुये बाण लिखते हैं कि जाबालि आश्रम में मुनियों के पीछे–पीछे अध्ययन (वेदादिपाठ) करने के कारण बोलते हुये शिष्यगण चल रहे थे।[4] इसी में आगे वर्णन मिलता है कि जाबालि आश्रम अध्ययन करते हुये बोलने वाले बटुकजनों से युक्त था।[5] बाण ने कादम्बरी में प्राचीन आश्रम–व्यवस्था की झलक प्रस्तुत की है जिसमें शिष्य गुरू के आश्रम में रहकर पच्चीस वर्ष तक शिक्षा ग्रहण करता है। यद्यपि बाण के

1. वैदिक साहित्य और संस्कृति–आ0 बलदेव उपाध्याय

2. क्रतुमिव वैतानिक वह्निभिः .। – काद0, पृ0 200

3. अनवरताज्याहुतिप्रातैश्चित्रभानुभिः सशरीरमेव मुनिजनमरलोकं निनीषुभिः, उद्ध्यमान–धूमलेखाच्छलेनाबद्धयमान–स्वर्गमार्ग–गमन–सोपान–सेतुमिवोपलक्ष्यमाणम्–कादम्बरी, पृ0 –184

4. अध्ययनमुखर –शिष्यानुगतैः सर्वतः प्रविशद्भिरू मुनिभिरशून्योपकण्ठम् – कादम्बरी, पृ0 184

5. अध्ययनमुखर – वटुजनम् – कादम्बरी, पृ0 186

समय तक भारत में नालन्दा, वलभी, विक्रमशिला जैसे बड़े–बड़े विश्वविद्यालय स्थापित हो चुके थे जहाँ देश–विदेश के छात्र शिक्षा ग्रहण करने आते थे फिर भी बाण ने कादम्बरी में आश्रम की षिक्षा का उल्लेख कर उसके महत्व को उद्घाटित किया है। आश्रम की पढ़ाई आधुनिक शिक्षा–प्रणाली से नितान्त भिन्न होती थी। आश्रम में विद्यार्थी मौखिक शिक्षा ग्रहण करते थे। गुरू जिस प्रकार का आचरण करता था शिष्य भी वैसा ही आचरण करते थे। इस प्रकार आश्रम में एक स्वस्थ समाज की स्थापना के लिये अच्छे व्यक्तित्व और चरित्र का

निर्माण किया जाता था। आश्रम में सभी विद्यार्थियों को चाहे वह किसान का लड़का हो या राजा का प्रतिदिन भोजन के लिये भिक्षा माँगना अनिवार्य था। इसके पीछे निहितार्थ यह था कि आश्रम से निकले हुये व्यक्ति पर समाज का ऋण होता था और वह समाज के लिये ही कार्य करता था। जबकि वर्तमान समय में शिक्षा अर्थप्रधान हो गयी है। व्यक्तित्व और चरित्र निर्माण के स्थान पर पूँजी निर्माण का साधन बन गयी है।

कादम्बरी में उल्लेख आया है कि चन्द्रापीड के अध्ययन के लिये तारापीड ने नगर से बाहर शिप्रा नदी के तट पर आधे कोष तक लम्बा–चौड़ा एक विद्यालय बनवाया था। उस विद्यामन्दिर में चन्द्रापीड शीघ्र ही योग्य आचार्यों के निर्देषन में व्याकरणशास्त्र, मीमांसाशास्त्र, न्यायशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, कामशास्त्र, सामुद्रिक–शास्त्र इत्यादि विविध विधाओं एवं कलाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया।[1]

1. चन्द्रपीडोऽप्यनन्यहृदयता तथानियन्त्रितो राज्ञा अचिरेणैव यथास्वमात्मकौशलं प्रकटयभ्द्रिः पात्रवषादुपजातोत्साहैराचाय्यैंरूपदिष्यमानः सर्वा विद्या जाग्रह। – कादम्बरी, पृ0 370

व्याकरण, मीमांसा, न्यायशास्त्र, धर्मशास्त्र ये शास्त्रीय शिक्षाक्रम के आवष्यक अंग. थे। युआनचुआग. ने नालन्दा के पाठ्यक्रम में इनका उल्लेख किया है। राजनीतिशास्त्र का भी उल्लेख आया है। गुप्तयुग की ज्ञान–साधना में कौटिल्य, बृहस्पति, शुक्र आदि के प्राचीन राजषास्त्रों का सविषेष पठन–पाठन होता था। अर्थशास्त्र के प्रतिसंस्कृत रूप में कामन्दक का नीतिसार उसी युग में तैयार किया गया। व्यायाम विद्या की शिक्षा का भी उल्लेख है जिसमें मल्लविद्या की साधना आवश्यक थीं प्रत्येक राजकुल में व्यायाम भूमि का पृथक् प्रबन्ध रहता था जिसमें व्यायाम के लिये उपयोगी सब साधन रखे जाते थे (समुपाहृत समुचित व्यायामोपकरण)।

धनुष, चक्र ढाल, तलवार, भाला, फरसा, गदा आदि आयुधों की शिक्षा भी चन्द्रापीड को दी गयी थी। दण्डायुध और पण्यायुध दो प्रकार के हथियार होते थे। छत्तीस आयुधों की सूची बाद के ग्रन्थों में आती है।[2] वहॉ 'रथचर्या' का सविशेष उल्लेख है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बाण ने कादम्बरी में जगह–जगह पर धार्मिक प्रसंगों का उल्लेख कर अपने धर्मषास्त्र–विषयक ज्ञान से पाठकों को परिचित कराने का पूर्ण प्रयास किया है।

1. प्रभावार्थं च भूतानां धर्म प्रवचनं कृतम्। – महाभारत
2. सर्वधर्म सूत्राणां वर्णाश्रम धर्मोपदेशित्वात् कुमारित्न। – तन्त्रवार्तिक
3. ''धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा, लोके धर्मिष्ठि प्रजा उपसर्पन्ति।
4. धर्मण पाथमपनुदति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठित तस्माद्धर्म परमं वदन्ति।।''–तै0 आरण्यक 10/63
5. –''धर्मे अर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षम्।
6. यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।।''–महाभारत 1/62/53
7. – ''धर्म एव हतो धर्मो हन्ति रक्षति रक्षितः।

8. तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो या। नो धर्मो हतोऽवधीत्।।''—मनु0 8/15

9. चोदना लक्षणोऽर्थो धर्मः — मीमांसासूत्र 1/1/2

10. तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् —वैशेषिकसूत्र 1/1/3

11. धृतिः क्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।

12. धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।—मनु03/92